भगतसिंह जनअधिकार यात्रा

बेरोज़गारी, महँगाई, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता और जनता की लूट के ख़िलाफ़ !

रोज़गार, शिक्षा, चिकित्सा, आवास और जुझारू जनएकजुटता के लिए !

जाति-धर्म के झगड़े छोड़ो!
सही लड़ाई से नाता जोड़ो!!

BHAGAT SINGH JAN ADHIKAR YATRA

BSJAY

सहयोग राशि: 10 रुपये

"

साम्प्रदायिकता सदैव संस्कृति की दुहाई दिया करती है। उसे अपने असली रूप में निकलने में शायद लज्जा आती है, इसलिए वह उस गधे की भाँति जो सिंह की खाल ओढ़कर जंगल में जानवरों पर रोब जमाता फिरता था, संस्कृति का खोल ओढ़कर आती है।"

(प्रेमचन्द, *साम्प्रदायिकता और संस्कृति*)

जनता का सच्चा सेक्युलरिज़्म क्या होता है?

यह शब्द कांग्रेस के नक़ली सेक्युलरिज़्म (धर्मनिरपेक्षता या 'सर्वधर्म समभाव') और भाजपा की साम्प्रदायिक फ़ासीवादी राजनीति के कारण काफ़ी कलंकित हो चुका है। इसलिए हमें पहले इस शब्द का मतलब समझ लेना चाहिए। सही मायने में इसका मतलब क्या है? यह शब्द आधुनिक युग की शुरुआत में यूरोप में पैदा हुआ था जब समाज के प्रगतिशील व क्रान्तिकारी तबकों ने राज्यसत्ता और धर्म व धार्मिक संस्थाओं की मिलीभगत का विरोध किया था और यह माँग उठायी थी कि **सरकार व राज्यसत्ता का धर्म से कोई लेना-देना नहीं होना चाहिए; धर्म हर नागरिक का पूर्णत: व्यक्तिगत मसला होना चाहिए जब तक कि वह किसी और की धार्मिक आज़ादी या आस्था की आज़ादी पर हमला न करे; किसी भी धर्म को मानना या किसी भी धर्म को न मानना हर नागरिक की आज़ादी होनी चाहिए; कोई भी राजनीतिक नेता धर्म या धार्मिक पहचान को राजनीति और सामाजिक जीवन से नहीं जोड़ेगा। एक ऐसे राज्य व ऐसी सरकार को ही सेक्युलर राज्य और सेक्युलर सरकार कहा गया।** बाद में, दुनिया के अलग-अलग मुल्कों में प्रबुद्ध, लोकतान्त्रिक और प्रगतिशील मध्यवर्ग और क्रान्तिकारी मेहनतकश वर्गों ने भी यही माँग उठायी क्योंकि उन्होंने देखा कि धर्म और राजनीति को मिलाने से शासक-शोषक जमातों को फ़ायदा होता है और आम लोगों को केवल नुक़सान होता है। अल्पसंख्यक शोषक वर्ग हमेशा धर्म का इस्तेमाल अपनी नाकामियों को छिपाने और आम जनता को मज़हब के नाम पर बाँटने और अपने शोषण व अत्याचार को धार्मिक वैधीकरण (सही ठहराने) देने के लिए करते हैं।

कहने को आज़ादी के बाद भारत ने भी संवैधानिक तौर पर अपने आपको 'सेक्युलर' (धर्मनिरपेक्ष) राज्य घोषित किया लेकिन भारत सही अर्थों में कभी एक सेक्युलर राज्य रहा ही नहीं। वरना यहाँ धर्म के आधार पर पर्सनल लॉ, धार्मिक संस्थाओं द्वारा धार्मिक शिक्षा, पुलिस स्टेशन में मन्दिर, स्कूलों में धार्मिक प्रार्थना

आदि की आज़ादी नहीं होती। यहाँ पर शुरू से ही हर चुनावी दल वोट बैंक की राजनीति की ख़ातिर धार्मिक भावनाओं से खिलवाड़ करने, धार्मिक उन्माद फैलाने, तुष्टिकरण करने और दंगे आदि करवाने की नीति पर कभी न कभी अमल करता रहा है। चाहे वह समय-समय पर कांग्रेस द्वारा तुष्टिकरण हेतु खेला गया नर्म साम्प्रदायिक कार्ड हो, शाह बानो जैसे मसले हों जहाँ इस्लामी कट्टरपन्थ का तुष्टिकरण किया गया, या फिर भाजपा व संघ परिवार द्वारा सीधे तौर पर फैलाया गया धार्मिक उन्माद और कट्टरता हो, जिसका नतीजा देश विशेष तौर पर पिछले चार दशकों में कई दंगों में भुगत चुका है।

सेक्युलरिज़्म का अर्थ सरकार या राज्यसत्ता द्वारा 'सारे धर्मों को समान मानना' नहीं होता। इसका अर्थ होता है राज्यसत्ता व सरकार का किसी भी धर्म से कोई मतलब न रखना, बल्कि केवल लोकतान्त्रिक तरीके से बने संविधान के प्रति निष्ठा रखना। यह दीगर बात है कि हमारे देश का संविधान भी लोकतान्त्रिक तरीके से नहीं बना है क्योंकि इसका मसौदा तैयार करने वाली संविधान सभा को सार्विक मताधिकार के आधार पर चुना ही नहीं गया था, बल्कि देश के सेठ, व्यापारी, ज़मीन्दारों ने अपने 11 प्रतिशत लोगों को मिले मताधिकार के आधार पर इसे चुना था। इसमें न तो देश के मज़दूर-किसान थे, न औरतें। नेहरू ने सार्विक मताधिकार के आधार पर संविधान सभा बुलाने का वायदा किया था जो कभी पूरा नहीं किया गया। बहरहाल, इस अलोकतान्त्रिक तरीके से बने संविधान में भी कहने के लिए भारत को एक सेक्युलर, जनवादी व समाजवादी राज्य कहा गया है। लेकिन वास्तव में भारतीय राज्य सच्चे मायने में, प्रगतिशील और क्रान्तिकारी अर्थों में, सेक्युलर नहीं रहा है। सेक्युलरिज़्म से जुड़ी केवल एक ही चीज़ है कि हमारे यहाँ राज्यसत्ता का कोई आधिकारिक धर्म नहीं है। लेकिन यही सेक्युलर होने के लिए पर्याप्त नहीं है।

सही मायने में सेक्युलर होने की ज़रूरत क्यों है?

सेक्युलर होने की ज़रूरत इसलिए है कि राजनीति का आधार समूची मेहनतकश जनता की आवश्यकताओं, हितों, परेशानियों, अभाव और तक़लीफ़ों पर विचार करना होना चाहिए चाहे उनका धर्म कोई भी हो; उसका आधार होना चाहिए कि समूची मेहनतकश जनता की आवश्यकताओं व हितों को पूर्ण किया जाये और उसकी परेशानियों, तकलीफ़ों और अभावों को दूर किया जाये चाहे उनका धर्म कोई

भी हो। उसका आधार होना चाहिए परजीवी व लुटेरी जमातों के विशेषाधिकारों को ख़त्म करना, सत्ता उनके हाथों से छीनकर मेहनतकश अवाम के हाथों में लेना। यही सही, सच्ची और जनपक्षधर राजनीति का आधार होना चाहिए। इसमें इस बात की कोई जगह नहीं होनी चाहिए कि किसी का धर्म क्या है या किसी का कोई धर्म नहीं है। **लोगों की आस्था या धर्म का भला इस बात से क्या रिश्ता है या कोई रिश्ता क्यों होना चाहिए कि उसको रोज़गार, शिक्षा, आवास, चिकित्सा, आदि बुनियादी हक़ हासिल हों? इसका भला धर्म से क्या रिश्ता कि हर नागरिक को अपनी योग्यता व क्षमता के अनुसार समाज में उत्पादक श्रम के ज़रिये योगदान देना चाहिए और बदले में राजनीतिक व्यवस्था को उसकी बुनियादी ज़रूरतों को पूरा करना चाहिए?** यह तो किसी की भी जनवादी स्वतन्त्रता है कि वह कोई धर्म माने, कोई पूजा-पद्धति माने, या कोई भी धर्म या पूजा पद्धति न माने। इसका रिश्ता केवल और केवल उसके निजी जीवन से है, उसके सामाजिक या राजनीतिक जीवन से बिल्कुल भी नहीं है।

इतिहास गवाह है कि जब किसी देश के शासक जनता को उसके ये बुनियादी हक़ जैसे शिक्षा, रोज़गार, चिकित्सा और आवास नहीं दे पाते तभी धर्म का मसला इनके द्वारा राजनीति में उठाया जाता है, उसका राजनीतिकरण किया जाता है। क्योंकि तब आम लोगों के असन्तोष को भटकाने के लिए, उन्हें भरमाने के लिए और उन्हें बाँट देने के लिए धर्म का शोर मचाना हुक्मरानों के लिए ज़रूरी हो जाता है। इसलिए **शहीदे-आज़म भगतसिंह** ने कहा था:

> "बस, सभी दंगों का इलाज यदि कोई हो सकता है तो वह भारत की आर्थिक दशा में सुधार से ही हो सकता है दरअसल भारत के आम लोगों की आर्थिक दशा इतनी खराब है कि एक व्यक्ति दूसरे को चवन्नी देकर किसी और को अपमानित करवा सकता है। भूख और दुख से आतुर होकर मनुष्य सभी सिद्धान्त ताक पर रख देता है। सच है, मरता क्या न करता... लोगों को परस्पर लड़ने से रोकने के लिए वर्ग-चेतना की ज़रूरत है। ग़रीब, मेहनतकशों व किसानों को स्पष्ट समझा देना चाहिए कि तुम्हारे असली दुश्मन पूँजीपति हैं। इसलिए तुम्हें इनके हथकण्डों से बचकर रहना चाहिए और इनके हत्थे चढ़ कुछ न करना चाहिए। संसार के सभी ग़रीबों के, चाहे वे किसी भी

जाति, रंग, धर्म या राष्ट्र के हों, अधिकार एक ही हैं। तुम्हारी भलाई इसी में है कि तुम धर्म, रंग, नस्ल और राष्ट्रीयता व देश के भेदभाव मिटाकर एकजुट हो जाओ और सरकार की ताकत अपने हाथों में लेने का प्रयत्न करो। इन यत्नों से तुम्हारा नुक़सान कुछ नहीं होगा, इससे किसी दिन तुम्हारी जंजीरें कट जायेंगी और तुम्हें आर्थिक स्वतन्त्रता मिलेगी।"

(भगतसिंह, *साम्प्रदायिक दंगे और उनका इलाज*, 1928)

साथियो, जिस बात को 21 साल की उम्र में हमारे महान शहीद क्रान्तिकारी व चिन्तक भगतसिंह ने समझ लिया था, उसे हम आज तक नहीं समझ पाये हैं। इसकी कीमत हर वर्ष दंगों में अपनी जान-माल का नुक़सान उठाकर ग़रीब मेहनतकश हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई सभी चुकाते हैं।

ऐसा क्यों होता है कि धर्म के उन्माद में अक्सर आम लोग बह जाते हैं? इसका जवाब ऊपर के उद्धरण में शहीदे-आज़म भगतसिंह ने ही दे दिया है। वजह यह होती है कि एक मुनाफ़ा-केन्द्रित व्यवस्था में लोग भूख, महँगाई, बेरोज़गारी, अशिक्षा, कुसंस्कृति और बेघरी से तंग, थके हुए और नाराज़ होते हैं। उनके अन्दर के गुस्से को एक क्रान्तिकारी रूप दिया जा सकता है, अगर शहीदेआज़म भगतसिंह ने जिस प्रकार की क्रान्तिकारी पार्टी की बात की थी, वह मौजूद हो। लेकिन अगर साम्प्रदायिक और फ़िरकापरस्त ताक़तें समाज में हावी होंगी तो वे आम जनता के इस गुस्से को एक अन्धी प्रतिक्रिया का रूप दे देती हैं, जिसमें आम लोग एक-दूसरे से ही झगड़ पड़ते हैं। **तर्क और विज्ञान के अभाव में वे यह समझ नहीं पाते कि उनकी ज़िन्दगी की इन समस्याओं के लिए वह व्यवस्था ज़िम्मेदार है, जो समस्त उत्पादन, विनिमय व वितरण चन्द धन्नासेठों, व्यापारियों, ठेकेदारों, धनी फार्मरों व दलालों के मुनाफ़े की ख़ातिर करती है, न कि समाज के उन मेहनतकश लोगों की ज़रूरतों के मुताबिक, जो सुई से लेकर जहाज़ तक बनाकर समूचे समाज को ज़िन्दा रखते और चलाते हैं।** ऊपर से इन मालिकों, सेठों, व्यापारियों के चन्दे पर चलने वाली तमाम चुनावबाज़ पार्टियाँ उन्हें भरमाती हैं और यह भरोसा दिलाती हैं कि हिन्दू का दुश्मन मुसलमान है, मुसलमान का दुश्मन हिन्दू है, बहुसंख्यक धार्मिक समुदाय के दुश्मन तमाम अल्पसंख्यक धार्मिक समुदाय के लोग हैं, "ऊँची" जाति के लोगों के दुश्मन "निचली" जाति के लोग हैं, इत्यादि। क्या आपने सोचा है कि दुनिया

के सारे देशों में अलग-अलग समुदायों के बीच दंगे-फ़साद उन्हीं दौरों में क्यों हुए हैं, जब वे देश आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक संकट से जूझ रहे थे, जब बेरोज़गारी, महँगाई और ग़रीबी चरम पर थी?

साथ ही, शासक वर्गों की नुमाइन्दगी करने वाली पार्टियाँ, उनके चिन्तक, उनका मीडिया व उनकी शिक्षा व्यवस्था बेरोज़गारी, महँगाई आदि को प्राकृतिक आपदा के तौर पर पेश करती हैं, मानो वे भूकम्प के समान हों, जिस पर किसी का नियन्त्रण नहीं होता! **लेकिन ज़रा सोचिए, क्या देश में भुखमरी इसलिए है कि खाने को खाना नहीं है?** अगर तथ्यों पर निगाह डालेंगे तो आपको पता चलेगा कि ऐसा बिल्कुल नहीं है। भारत खेतिहर मज़दूर और ग़रीब किसान अपनी हाड़तोड़ मेहनत से पर्याप्त चावल, गेहूँ, दालें व अन्य अनाज तथा सब्जियाँ आदि पैदा करते हैं। सच यह है कि *यूनाइटेड नेशंस इनवाइरॉनमेण्ट प्रोग्राम* के *फूड वेस्ट इण्डेक्स 2021* के अनुसार **भारत में प्रतिवर्ष औसतन 68.8 लाख टन अनाज बेकार हो जाता है, सड़ जाता है, उसे चूहे खा जाते हैं। जिस देश में 5 वर्ष से कम उम्र के 5000 बच्चे रोज़ भूख और कुपोषण से मर जाते हैं, उस देश में भला 68.8 लाख टन प्रति वर्ष बरबाद कैसे हो जाता है?** इसलिए क्योंकि इस भोजन और भूखे लोगों के बीच एक दीवार खड़ी है: मुनाफ़े की दीवार। यदि यह सारा अनाज ज़रूरतमन्द लोगों के बीच बाँट दिया जाय, तो अनाज बेचकर मुनाफ़ाखोरी करने वाले धनी किसानों, कम्पनियों, व्यापारियों, बिचौलियों व आढ़तियों का मुनाफ़ा कहाँ जायेगा? इसके अलावा, समूचा मालिक वर्ग चाहता है कि ग़रीब मेहनतकश आबादी लगातार गरज़मन्द और ज़रूरतमन्द बनी रहे, क्योंकि तभी वह उनको कम-से-कम मज़दूरी पर काम करने के लिए मजबूर करके औसत मज़दूरी को घटा सकता है और औसत मुनाफ़े को बढ़ा सकता है। जब मालिक वर्ग मन्दी से बिलबिलाया होता है, तब औसत वास्तविक मज़दूरी को घटाने के लिए उसके फेंके टुकड़ों पर पलने वाली पार्टियों की सरकारें तमाम उपाय निकालती हैं। मौजूदा दौर में, नये लेबर कोड के तहत मज़दूरों के 8 घण्टे के कार्यदिवस को ख़त्म करने, अप्रेण्टिस व ट्रेनी के नाम पर न्यूनतम मज़दूरी से भी कम में 10-10, 12-12 घण्टे खटाने, बाल व किशोर श्रम करवाने के सारे इन्तज़ाम मोदी जी यूँ ही थोड़े ही कर रहे हैं!

भूख की समस्या वाली बात ही बेघरी की समस्या पर भी लागू होती है। 2012 में ही भारत सरकार ने कहा था कि बेघरी की समस्या को हल करने के लिए भारत में **1.878 करोड़ मकानों** की आवश्यकता है। क्या भारत में मकानों की कमी है?

आइये, देखते हैं। **केवल शहरों में 2011 की जनगणना के आँकड़ों के अनुसार 1.1 करोड़ मकान ख़ाली पड़े थे, क्योंकि उन्हें ख़रीदार नहीं मिल रहे थे! इन मकानों में 5 करोड़ लोगों को आशियाना मिल सकता है।** लेकिन लोग जाड़ों में फ़ुटपाथों पर ठिठुर-ठिठुरकर मरते हैं और गर्मियों में सड़कों पर लू के थपेड़े खाकर दम तोड़ देते हैं। मगर उन्हें सिर पर छत नसीब नहीं होती, हालाँकि मकानों की कोई कमी नहीं है। जो लोग इन मकानों को बनाने में ख़ून-पसीना बहाते हैं और जानें तक गँवाते हैं, ठीक उन्हीं लोगों को एक अदद छत नहीं मुहैया होती, क्योंकि उन पर परजीवी बिल्डरों का एकाधिकार है, जो मकानों को बनाने में उंगली तक नहीं हिलाते। केवल उनके पास उत्तराधिकार से जमा पूँजी और उत्पादन के साधनों पर इजारेदारी है, जो सुदूर अतीत में मेहनतकश उत्पादकों से छीनकर ही इकट्ठा हुई है और वास्तव में वह समाज के प्रत्यक्ष उत्पादकों की ही सामूहिक सम्पदा है। **क़ायदे से एक जनपक्षधर सरकार और व्यवस्था को हर नागरिक को सरकारी आवास का अधिकार देना चाहिए और बदले में हर नागरिक के लिए यह बाध्यताकारी होना चाहिए कि वह समाज के विकास के लिए उत्पादक श्रम में योगदान करे।** लेकिन समाज के 80 फ़ीसदी लोग उत्पादक श्रम में किसी न किसी रूप में भागीदारी तो अवश्य करते हैं, लेकिन उनके सारे हक़ वे हड़प जाते हैं, जिनकी ऐय्याशी और ऐश्वर्य की मीनारें जनता के आँसुओं के समन्दर में खड़ी हैं: यानी मालिकों, ठेकेदारों, धनी व्यापारियों, धनी पूँजीवादी किसानों, बिल्डरों, प्रापर्टी डीलरों, दलालों, बिचौलियों, नेताओं, नौकरशाहों का पूरा वर्ग, यानी वीआईपी लोग, जिनकी ऊँची चमकदार गाड़ियों के गुज़रने के लिए सड़कें ग़रीबों से ख़ाली करवा दी जाती हैं। गोरख पाण्डे की यह कविता बरबस ही याद आती है:

भाइयो और बहनो!
अब यह आलीशान इमारत
बनकर तैयार हो गई है
अब आप यहां से जा सकते हैं।
...
यह मत पूछिए कि कहाँ जायें,
जहाँ चाहें वहाँ जायें
फिलहाल, उस अँधेरे में

कटी जमीन पर
जो झोंपड़े डाल रखे हैं
उन्हें भी खाली कर दें।
फिर जहाँ चाहें वहाँ जायें।
आप आज़ाद हैं
हमारी ज़िम्मेवारी खत्म हुई
अब एक मिनट के लिए भी
आपका यहाँ ठहरना ठीक नहीं,
महामहिम आने वाले हैं
विदेशी मेहमानों के साथ।
आने वाली हैं अप्सराएँ,
और अफसरान।
पश्चिमी धुनों पर शुरू होने वाला है
उन्मादक नृत्य।
जाम छलकने वाले हैं
भला आपकी यहाँ क्या ज़रूरत हो सकती है?
और वे आपको यहाँ देखकर क्या सोचेंगे?
गन्दे कपड़े और धूल में सने शरीर
ठीक से बोलने, हाथ हिलाने का भी शऊर नहीं।
उनकी रुचि और उम्मीद को
कितना धक्का लगेगा
और हमारी कितनी तौहीन होगी।
...
शायद अपनी इस विशाल और खूबसूरत रचना से,
आपको मोह हो गया है
इसे छोड़कर जाने में दुख हो रहा है।
ऐसा हो सकता है!
मगर इसका मतलब यह तो नहीं
कि आप जो कुछ भी अपने हाथों से बनायेंगे,
वह सब आपका हो जाएगा।

इस तरह तो यह सारी दुनिया आपकी होती,
फिर हम मालिक लोग कहाँ जाते।
याद रखिए
मालिक, मालिक होता है
मज़दूर, मज़दूर।
आपको काम करना है
हमें उसका फल भोगना है
आपको स्वर्ग बनाना है
हमें उसमें विहार करना है।
अगर ऐसा सोचते हैं
कि आपको अपने काम का
पूरा फल मिलना चाहिए,
तो हो सकता है
कि पिछले जन्मों के आपके काम,
आपको अभावों के नरक में ले जा रहे हों।
विश्वास कीजिए
धर्म के सिवा कोई रास्ता नहीं,
अब आप यहाँ से जा सकते हैं।

(गोरख पाण्डे, *स्वर्ग से बिदाई*)

इस कविता ने एक सामाजिक सच्चाई को बिल्कुल सटीक पकड़ा है। क्या आपको नहीं लगता?

भोजन और आवास के ही समान हम आम लोगों को अन्य जिन सभी अभावों का सामना करना पड़ता है, उनका कारण भी वास्तविक अभाव नहीं है, बल्कि एक मुनाफ़ा-केन्द्रित लुटेरी व्यवस्था द्वारा पैदा किया गया कृत्रिम अभाव है। न तो हमारी शस्य-श्यामला धरती पर संसाधनों की कमी है, न काम करने योग्य कुशल व हुनरमन्द हाथों व मस्तिष्कों की। लेकिन तमाम क़ाबिलियतें हासिल करने के बाद, एक आम घर का युवा डिग्रियाँ बगल में दबाये सड़कों पर भटकते-भटकते भरी जवानी में बूढ़ा हो जाता है। हताशा उसकी आँखों पर काले अन्धेरे की तरह छा जाती है। चेहरे पर झुर्रियों-झाँइयों का डेरा पड़ जाता है। **यह हम सबके ही**

साथ होता है चाहे हम हिन्दू हों, मुसलमान हों, सिख हों, ईसाई हों, सवर्ण हों, दलित हों, पिछड़े हों... बस अगर आप आम मेहनतकश घर में पैदा हुए तो बस यही आपका अपराध है। और यदि आप चाँदी का चम्मच मुँह में लेकर पैदा हुए हों, तो आप अव्वल दर्जे के नालायक, नाखादा और नाकारे हों, तो भी आपको एक ऊँची कुर्सी मिलती है, आपको भारतीय क्रिकेट बोर्ड का अध्यक्ष भी बनाया जा सकता है, बेशक़ आप यह न बता सकते हों कि बल्ले और गेंद में से बल्ला कौन-सा है और गेंद कौन-सी है!

एक ऐसे देश में ज़ाहिरा तौर पर हममें गुस्सा होता है, हम अपनी आर्थिक और सामाजिक असुरक्षा से तंग और चिड़चिड़ाए हुए होते हैं, हमें पता नहीं होता कि इसका ज़िम्मेदार कौन है, हम दुश्मन की तलाश में होते हैं। लेकिन अक्सर हमारे पास इस मुनाफ़ाखोर व्यवस्था और उसके शीर्ष पर बैठे सेठों-व्यापारियों-भूस्वामियों-धनी किसानों के वर्ग का कोई विश्लेषण नहीं होता, कोई राजनीतिक नेतृत्व नहीं होता जो यह विश्लेषण मुहैया करा सके। फिर असुरक्षा व अनिश्चितता से श्रान्त-क्लान्त हमारी जमात के सामने अचानक कोई धर्मध्वजा लहराते हुए प्रकट होता है और हमसे कहता है कि तुम्हारे दुश्मन दूसरे मज़हब के लोग हैं; हमारे सामने एक **छद्म शत्रु** यानी **नकली दुश्मन** की छवि बनायी जाती है, ताकि असली दुश्मन को छिपाया और बचाया जा सके; उस छद्म शत्रु के बारे में तमाम मिथकों को इतनी बार दुहराया जाता है कि वे हमें सच लगने लगते हैं; सारा मीडिया इस काम में हुक्मरानों का साथ देता है क्योंकि मीडिया 'लोकतन्त्र का चौथा खम्भा' नहीं होता, बल्कि धनी वर्गों के बंगले का एक खम्भा होता है जिसका इस्तेमाल धन्नासेठों के पालतू कुत्ते उचित उद्देश्य के लिए करते रहते हैं। मीडिया स्वयं सबसे ख़तरनाक दंगाई के रूप में सामने आता है और झूठ और अफ़वाहों की ऐसी बारिश करता है कि हमें सोचने का वक़्त ही नहीं मिलता। **मुफ़लिसी, डर और असुरक्षा-अनिश्चितता से हम इस क़दर थके, हताश और नाराज़ होते हैं कि साम्प्रदायिक ताक़तों द्वारा खड़ी की गयी एक नकली दुश्मन की छवि के प्रति हमारी अन्धी प्रतिक्रिया हमें एक-दूसरे का दुश्मन बना देती है। हमारे हाथों में इन सेठ-व्यापारियों का वर्ग ही त्रिशूलें और तलवारें पकड़ा देता है और दंगों में झोंक देता है। इस तरह हमारे मेहनतकश समाज के शरीर पर जोंकों की तरह चिपके हुए मुट्ठी भर हुक्मरान हमें बाँटकर आपस में ही लड़ाने में क़ामयाब हो जाते हैं। यह भी याद रखें कि ये हुक्मरान ख़ुद कभी धर्म**

के नाम पर एक-दूसरे का सिर नहीं फोड़ते और न ही अपने बच्चों के हाथ में दंगों के हथियार पकड़वाते हैं। उनके बच्चे तो अमेरिका, इंग्लैण्ड, ऑस्ट्रेलिया, जर्मनी, फ्रांस आदि में पढ़ाई करते हैं और वापस आने पर उन्हें अपने बाप का साम्राज्य सौंप दिया जाता है चाहे उन्हें गन्ने और मूंज में फ़र्क करना भी न आता हो। भाजपा नेता पीयूष गोयल का बेटा हार्वर्ड यूनीवर्सिटी में पढ़ता है, प्रकाश जावड़ेकर का बेटा बॉस्टन यूनीवर्सिटी, राजनाथ सिंह, निर्मला सीतारमण और एस. जयशंकर के बच्चे भी लीड्स यूनीवर्सिटी, नॉर्थवेस्टर्न यूनीवर्सिटी, जॉर्जटाउन यूनीवर्सिटी व डेनीज़न यूनीविर्सिटी जैसे विदेशी विश्वविद्यालयों से पढ़े हैं, जहाँ की फ़ीसें करोड़ों रुपये प्रति वर्ष होती है; रविशंकर प्रसाद का बेटा कॉर्नेल यूनीवर्सिटी से पढ़ा है, गजेन्द्र सिंह शेखावत की बेटी ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से पढ़ी है। ये सारे भाजपाई नेता इतने ही "राष्ट्रभक्त" हैं तो अपने बच्चों को बचपन से संघ परिवार के सरस्वती शिक्षा मन्दिर में क्यों नहीं भेजते जहाँ बाल मस्तिष्कों में साम्प्रदायिक नफ़रत का ज़हर घोला जाता है? ये इतने ही प्राचीन भारतीय संस्कृति के दीवाने हैं, तो अपने बच्चों को किसी भारतीय विश्वविद्यालय या गुरुकुल में उच्च शिक्षा के लिए क्यों नहीं भेजते? यानी, भाजपाई "राष्ट्रवादियों" के बच्चे पढ़ें ऑक्सफोर्ड, कैम्ब्रिज और हार्वर्ड विश्वविद्यालयों में और कान्वेण्ट प्राइवेट स्कूलों में और हमारे बच्चे जाएँ सरस्वती शिशु मन्दिर में, वहाँ से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शाखा में और फिर बजरंग दल की दंगावाहिनी में जहाँ उनके हाथों में त्रिशूल-तलवार पकड़ा दिये जायें। यानी, हमारे बच्चे जायें दंगों के कारख़ानों में! फिर मीडिया हमें बताता है, "मोदी जी ने किया है, तो कुछ सोच कर ही किया गया होगा!" यह समूचा भाजपाई "राष्ट्रवाद" और "देशभक्ति", "धर्मध्वजारक्षा" और "चाल-चेहरा-चरित्र" की बात हमारे देश का सबसे बड़ा घोटाला और चार सौ बीसी है।

हमारे प्यारे शहीद भगतसिंह के इन शब्दों पर ग़ौर करिए, जो इस सच्चाई को 1928 में ही समझ चुके थे:

> "जहाँ तक देखा गया है, **इन दंगों के पीछे साम्प्रदायिक नेताओं और अख़बारों का हाथ है।** इस समय हिन्दुस्तान के नेताओं ने ऐसी लीद की है कि चुप ही भली। वही नेता जिन्होंने भारत को स्वतन्त्र कराने का बीड़ा अपने सिरों पर उठाया हुआ था और जो 'समान राष्ट्रीयता' और 'स्वराज्य-स्वराज्य' के दमगजे भरते नहीं थकते थे,

वही या तो अपने सिर छिपाये चुपचाप बैठे हैं या इसी धर्मान्धता के बहाव में बह चले हैं। सिर छिपाकर बैठने वालों की संख्या भी क्या कम है? लेकिन ऐसे नेता जो साम्प्रदायिक आन्दोलन में जा मिले हैं, जमीन खोदने से सैकड़ों निकल आते हैं। जो नेता हृदय से सबका भला चाहते हैं, ऐसे बहुत ही कम हैं। और साम्प्रदायिकता की ऐसी प्रबल बाढ़ आयी हुई है कि वे भी इसे रोक नहीं पा रहे। ऐसा लग रहा है कि भारत में नेतृत्व का दिवाला पिट गया है।

"**दूसरे सज्जन जो साम्प्रदायिक दंगों को भड़काने में विशेष हिस्सा लेते रहे हैं, अख़बार वाले हैं।** पत्रकारिता का व्यवसाय, किसी समय बहुत ऊँचा समझा जाता था। आज बहुत ही गन्दा हो गया है। यह लोग एक-दूसरे के विरुद्ध बड़े मोटे-मोटे शीर्षक देकर लोगों की भावनाएँ भड़काते हैं और परस्पर सिर फुटौव्वल करवाते हैं। एक-दो जगह ही नहीं, कितनी ही जगहों पर इसलिए दंगे हुए हैं कि स्थानीय अख़बारों ने बड़े उत्तेजनापूर्ण लेख लिखे हैं। ऐसे लेखक बहुत कम है जिनका दिल व दिमाग ऐसे दिनों में भी शान्त रहा हो।

"अख़बारों का असली कर्त्तव्य शिक्षा देना, लोगों से संकीर्णता निकालना, साम्प्रदायिक भावनाएँ हटाना, परस्पर मेल-मिलाप बढ़ाना और भारत की साझी राष्ट्रीयता बनाना था लेकिन इन्होंने अपना मुख्य कर्त्तव्य अज्ञान फैलाना, संकीर्णता का प्रचार करना, साम्प्रदायिक बनाना, लड़ाई-झगड़े करवाना और भारत की साझी राष्ट्रीयता को नष्ट करना बना लिया है। यही कारण है कि भारतवर्ष की वर्तमान दशा पर विचार कर आँखों से रक्त के आँसू बहने लगते हैं और दिल में सवाल उठता है कि 'भारत का बनेगा क्या?'"

(भगतसिंह, *साम्प्रदायिक दंगे और उनका इलाज,* 1928, *ज़ोर हमारा*)

आज बस आप अख़बार की जगह समूचा मीडिया शब्द रख दीजिए और शहीदेआज़म द्वारा वर्णित स्थिति को दस गुना भयंकर, बुरा और बर्बर बना दीजिए, तो क्या यही हमारे देश की वर्तमान हालात और सच्चाई नहीं बन जायेगी? कुछ लोग भगतसिंह को केवल बम-पिस्तौल वाला बहादुर क्रान्तिकारी

समझते हैं और देश के हुक्मरान उनकी ऐसी ही छवि बनाना चाहते हैं, ताकि हम लोग अपने इस महान शहीद के विचारों को न जान पायें, यह न जान पायें कि वह केवल एक महान युवा बहादुर क्रान्तिकारी ही नहीं थे, बल्कि एक महान क्रान्तिकारी चिन्तक-विचारक भी थे।

ज़रा इन सवालों पर सोचिए, भाइयो-बहनो!

कुछ सवाल जो आपके सामने साम्प्रदायिक राजनीति की सच्चाई को उजागर कर देंगे

अब हम आपके सामने कुछ सवाल रखेंगे हमारे प्यारे साथियो। आपसे प्रार्थना है कि इन पर सोचकर ख़ुद को ही इनका जवाब देने की कोशिश कीजिए।

ज़रा सोचिए, दंगों और साम्प्रदायिक टकरावों में कभी कोई नेता, कोई पूँजीपति, कोई सेठ-व्यापारी क्यों नहीं मरता? दंगों में हमेशा आम ग़रीब मज़दूरों, मेहनतकश लोगों, निम्नमध्यवर्ग के कामकाज़ी लोगों के घर क्यों जलते हैं? उनकी जानें ही क्यों जाती हैं? कभी कोई तोगड़िया, कोई ओवैसी इन दंगों में क्यों नहीं मरता? कभी किसी सिंघल, योगी या अमृतपाल का घर क्यों नहीं जलता? कोई तो वजह होगी! ज़रा सोचिए।

ज़रा सोचिए, "धर्मध्वजारक्षा" के लिए सड़कों पर त्रिशूल-तलवार लहराने और अपने ही भाइयों-बहनों का क़त्ल करने का काम कभी संघ परिवार व भाजपा तथा एआईएमआईएम के नेताओं की औलादों को क्यों नहीं सौंपा जाता? यह काम हमेशा हम आम मेहनतकश लोगों के बच्चों को क्यों सौंपा जाता है कि वे किसी अमूर्त "धर्मध्वजारक्षा" के नाम पर सड़कों पर भटकें?

ज़रा सोचिए, जो संघ परिवार और भाजपा आपको गोरक्षा के नाम पर भड़काते हैं, उनका नेता **संगीत सोम *अल दुआ* नामक बूचड़खाने का एक निदेशक कैसे था? नगालैण्ड के भाजपा नेता विसासोली ल्होंगू ने क्यों कहा कि नगालैण्ड में कभी बीफ़ बैन नहीं लगेगा? भाजपा नेता व मणिपुर के मुख्यमन्त्री बिरेन सिंह ने क्यों कहा कि मणिपुर में बीफ़ खाने पर कोई रोक नहीं, क्या खाना है यह सबका व्यक्तिगत मसला है?** बात तो सही है, खान-पान, पहनावा, रहन-सहन लोगों का व्यक्तिगत मसला है और इसमें किसी पार्टी या सरकार को दख़ल देने का

कोई हक़ नहीं। फिर भाजपा यह दोमुँहापन क्यों दिखाती है? **मेघालय के भाजपा नेता अर्नेस्ट मावरी ने क्यों कहा कि "मैं बीफ़ खाता हूँ, यह मेघालय की जीवनशैली है और इसे कोई नहीं रोक सकता"? केरल में मलप्पुरम में उम्मीदवार भाजपा नेता श्रीप्रकाश ने क्यों वायदा किया था कि वहाँ वह बीफ़ की सप्लाई को कम नहीं होने देंगे और बीफ़ के उपभोग पर कभी रोक नहीं लगायी जायेगी? 2017 में ख़ुद अमित शाह ने क्यों कहा था कि गोवा में भाजपा का बीफ़ पर बैन लगाने का दूर-दूर तक कोई इरादा नहीं है?** भाजपा के गुरू विनायक सावरकर ने तो कहा था कि गाय केवल एक पशु है, कोई माता नहीं! इस पर भाजपा का क्या कहना है? कुछ नहीं! क्यों?

ज़रा सोचिए, **अगर 'लव जिहाद' भाजपा को ख़तरा दिखता है, तो भाजपा नेता शाहनवाज़ हुसैन की एक हिन्दू महिला से शादी, भाजपा नेता मुख़्तार अब्बास नक़वी की एक हिन्दू महिला से शादी, भाजपा नेता सुशील मोदी की एक ईसाई महिला से शादी, भाजपा नेता सिकन्दर बख्त की एक हिन्दू महिला से शादी, भाजपा नेता सुब्रमन्यम स्वामी की बेटी की एक मुसलमान से शादी 'लव जिहाद' क्यों नहीं है? 'लव जिहाद' क्या केवल बाकी जनता के लिए है ताकि वे इस बकवास पर अपना सिर-फुटौव्वल करे? सभी धर्मों के कट्टरपन्थी नेता इसी तरह का दोहरा जीवन जीते हैं और अपने-अपने मज़हब की आम जनता को ग़ैर-मुद्दों पर भड़काकर दंगे-फ़साद का माहौल तैयार करते हैं।**

यानी, इन फ़र्ज़ी मसलों पर हम सिर-फुटौव्वल करें, एक-दूसरे को मारें-काटें और हमारी चिताओं पर रोटी सेंकने का काम ये चुनावबाज़ पार्टियाँ व समूचा शासक वर्ग करे, जिनका ये पार्टियाँ प्रतिनिधित्व करती हैं। यह है इनकी असली चाल: जनता को बाँटो और राज करो। कोई ताज़्ज़ुब की बात नहीं है कि आज़ादी की लड़ाई में जब भगतसिंह, राजगुरू,

"एक तरफ जहाँ जन आन्दोलन और राष्ट्रीय आन्दोलन हुए, वहीं, उनके साथ-साथ जातिगत और साम्प्रदायिक आन्दोलनों को भी जान-बूझकर शुरू किया गया क्योंकि ये आन्दोलन न तो अंग्रेज़ों के खिलाफ़ थे, न किसी वर्ग के, बल्कि ये दूसरी जातियों के खिलाफ़ थे।"

- गणेश शंकर विद्यार्थी

सुखदेव, चन्द्रशेखर आज़ाद, अशफ़ाक़उल्ला जैसे बहादुर नौजवान क़ुर्बानियाँ दे रहे थे, तो संघ परिवार अंग्रेज़ों के खिलाफ़ एक शब्द भी नहीं बोल रहा था, उल्टे इसके लोग क्रान्तिकारियों की मुखबिरी कर रहे थे, माफ़ीनामे लिख रहे थे। अंग्रेज़ों से ही इन्होंने 'बाँटो और राज करो' की नीति सीखी है। जिस साम्प्रदायिकता की राजनीति की ज़हरीली फसल अंग्रेज़ों ने बोई थी, संघ परिवार व इस्लामी कट्टरपन्थी दोनों ही उसे आज तक काट रहे हैं।

यह भी याद रखें कि हर धर्म में जो कट्टरपन्थी और साम्प्रदायिक ताक़तें हैं, वे एक-दूसरे को खाद-पानी देती हैं और एक-दूसरे की दुकान चलाने में एक-दूसरे की मदद करती हैं। आज़ादी से पहले मुस्लिम लीग और हिन्दू महासभा एक सिक्के के ही दो पहलू थे और धार्मिक आधार पर विभाजन का इन दोनों ने ही समर्थन किया था, चाहे तो आप जिन्ना और श्यामा प्रसाद मुखर्जी के इतिहास को ख़ुद उठा कर पढ़ लें। यह श्यामा प्रसाद मुखर्जी ही भारतीय जनसंघ के संस्थापक थे, जो भाजपा की पूर्वज पार्टी थी और भाजपा के लोग मुखर्जी को अपने संस्थापकों में मानते हैं। आज भी बिना संघी साम्प्रदायिकता और इस्लामी कट्टरपन्थ एक-दूसरे के पूरक का काम करते हैं। यहाँ तक कि हर धार्मिक समुदाय में ही कट्टरपन्थी ताक़तें दूसरे धार्मिक समुदाय में मौजूद कट्टरपन्थ के साथ सहकार और सहयोग का सम्बन्ध रखती है। आज पंजाब में अमृतपाल की धार्मिक कट्टरपन्थ की राजनीति भी संघी साम्प्रदायिकता की राजनीति के साथ इसी तरह की पूरकता का सम्बन्ध रखती है, चाहे दोनों ऊपर से एक-दूसरे के ख़िलाफ़ कितनी भी आग उगल लें। पंजाब के सारे सूझ-बूझ वाले हमारे साथी, भाई व बहन इस सच्चाई को अच्छी तरह जानते-समझते हैं। केरल में ईसाई कट्टरपन्थ और संघी साम्प्रदायिकता के बीच के टकराव के बारे में भी यही बात सच है कि ये दोनों ही एक-दूसरे का पोषण करते हैं। **धार्मिक पहचान के आधार पर होने वाली राजनीति की यही पहचान है। और ये राजनीति कौन करता है और किन वर्गों या जमातों को इसका फ़ायदा मिलता है?** आइये, इसे समझते हैं।

जब एक शोषक-शासक अल्पसंख्या को बहुसंख्यक मेहनतकश अवाम पर शासन चलाना होता है, तो वह बस डण्डे के ज़ोर पर नहीं चला सकती। वह अपनी ख़तरनाक विचारधारा और नज़रिया जनता के बीच फैलाती है, जिससे कि जनता अपने हालात को स्वीकार कर ले, यथास्थिति को नियति का लेखा मानकर बैठ जाये। साम्प्रदायिकता व जातिवाद इसी श्रेणी में आने वाली ख़तरनाक

“फिर हमारी समझ में नहीं आता कि वह कौन सी संस्कृति है, जिसकी रक्षा के लिए साम्प्रदायिकता इतना ज़ोर बाँध रही है। वास्तव में संस्कृति की पुकार केवल ढोंग है, निरा पाखण्ड। शीतल छाया में बैठे विहार करते हैं। यह सीधे-सादे आदमियों को साम्प्रदायिकता की ओर घसीट लाने का केवल एक मन्त्र है और कुछ नहीं। हिन्दू और मुस्लिम संस्कृति के रक्षक वही महानुभाव और वही समुदाय हैं, जिनको अपने ऊपर, अपने देशवासियों के ऊपर और सत्य के ऊपर कोई भरोसा नहीं, इसलिए अनन्तः तक एक ऐसी शक्ति की ज़रूरत समझते हैं जो उनके झगड़ों में सरपंच का काम करती रहे।”

- प्रेमचन्द

विचारधाराएँ हैं। इनका मक़सद ही यही है कि आम मेहनतकश बहुसंख्यक जनता को खण्ड-खण्ड में बाँटे रखो, कभी धर्म के नाम पर उन्माद फैलाकर लड़ाओ, कभी जातिवादी श्रेष्ठताबोध व पहचान की राजनीति में उलझाकर सिर-फुटौव्वल करवाओ, कभी क्षेत्र-भाषा के नाम पर लड़ाओ, ताकि आम मेहनतकश जनता अपने साझा हितों व उद्देश्यों के लिए अपने साझा दुश्मन, यानी सरमायेदारों के ख़िलाफ़ कभी एकजुट ही न हो पाये। हम दावे से कह सकते हैं कि सारे धर्मों में साम्प्रदायिक व कट्टरपन्थी राजनीति करने वाले ये सियासतदान जब अपनी बर्थडे पार्टियों, शादी समारोहों, होली मिलन, इफ़्तार पार्टी में इकट्ठा होते हैं, तो हमें धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्र के नाम पर बाँटने और हमें मूर्ख बनाने पर ख़ूब जश्न मनाते हैं और हम पर हँसते हैं।

तो हमें क्या करना चाहिए? हमें हर रंग की साम्प्रदायिक व कट्टरपन्थी ताक़तों की असलियत को समझना चाहिए, धन्नासेठों-अमीरज़ादों के हित में उनके द्वारा की जा रही साज़िश को समझना चाहिए और भगतसिंह व उनके साथियों की विचारधारा की ज़मीन पर खड़ा होकर हुक्मरानों के द्वारा प्रचारित व पोषित दृष्टिकोण, विचारधारा और षड्यन्त्र का खण्डन करना चाहिए और उसे पूरी तरह से ठुकरा देना चाहिए। सभी धर्मों के हम मेहनतकश व आम मध्यवर्ग के लोगों को एक-दूसरे की व्यक्तिगत आस्था को पूर्णत: व्यक्तिगत मसला बना देना चाहिए, उसे राजनीति और सामाजिक जीवन से बिल्कुल अलग कर देना चाहिए और

तमाम भ्रष्ट, अपराधी व साम्प्रदायिक नेता चाहे जितना भी भड़काएँ, इस उसूल को हमें छोड़ना नहीं चाहिए। वरना, हमारे भविष्य में केवल बरबादी लिखी होगी।

ज़रा उन देशों पर निगाह दौड़ाइए जहाँ किसी भी क़िस्म की कट्टरतावादी राजनीति ने जड़ जमायी और जनता उसमें बह गयी और देखिए कि उन देशों का क्या हुआ? वे बरबाद हो गये और आने वाली कई पीढ़ियों ने इस बरबादी की क़ीमत चुकायी। जर्मनी में यह काम नस्लवाद के नाम पर हुआ। यहूदियों को नात्सी पार्टी ने एक छद्म शत्रु बनाकर जर्मनी के दुश्मन और जर्मनी की सारी समस्याओं के ज़िम्मेदार के तौर पर बेरोज़गारी और तंगहाली से थकी और नाराज़ जनता के सामने पेश किया। जनता का एक विचारणीय हिस्सा उसमें बह गया। **नात्सी जर्मनी का अन्ततः क्या हुआ? विध्वंस! नात्सियों के नेता हिटलर का क्या हुआ? हार को सामने खड़ा देख एक बंकर में उसने एक कायर के समान आत्महत्या कर ली।** आज तक जर्मनी की आम जनता नात्सीवाद से नफ़रत करती है और अतीत की ग़लती का आज तक समाहार कर रही है। **इटली में हिटलर से पहले से कट्टरपन्थी राजनीति कर रहे मुसोलिनी का क्या हुआ? पूरा इटली उसने फिरकापरस्ती में तबाह कर दिया और जब लोगों के सामने सच्चाई आयी तो उसे मारकर चौराहे पर लटका दिया और घण्टों तक लोग उसकी लाश पर थूकते रहे।** हाल ही में, एक दूसरे तरीके से फ़िरक़ापरस्त और धार्मिक बहुसंख्यवादी राजनीति का नतीजा श्रीलंका में भी देखने को मिला। दशकों तक श्रीलंका सिंहली कौमी व धार्मिक कट्टरपन्थ के कारण गृहयुद्ध में उलझा रहा और जब जनता को एकजुट होने की आवश्यकता थी, तो वह एकजुट भी नहीं हो सकी क्योंकि कट्टरपन्थ की राजनीति जब एक देश को जमाती तौर पर यानी वर्गीय तौर पर एकजुट होने से रोक देती है, तो कोई एक समुदाय भी एकजुट होने की भौतिक-नैतिक ताक़त काफ़ी समय के लिए खो देता है। फ़िरक़ापरस्ती, कट्टरपन्थ और साम्प्रदायिकता हमेशा आम जनता को तोड़ देती है जबकि हुक्मरानों को कम-से-कम फ़ौरी तौर पर मज़बूत कर देती है। **क्या हम अपने देश के लिए भी ऐसा भविष्य चाहते हैं? कोई भी देशप्रेमी ऐसा नहीं चाहेगा।**

तो फिर रास्ता क्या है?

क्रान्तिकारी सेक्युलरिज़्म ही जनता को आपसी मार-काट और क़त्ले-आम से बचा सकता है

रास्ता है शहीदेआज़म भगतसिंह ने जिस क्रान्तिकारी सेक्युलरिज़्म की बात की थी, उसे अपनाना। शहीदेआज़म ने क्या कहा था, ख़ुद उनके शब्दों में ही सुनिये:

> "1914-15 के शहीदों ने धर्म को राजनीति से अलग कर दिया था। वे समझते थे कि धर्म व्यक्ति का व्यक्तिगत मामला है इसमें दूसरे का कोई दख़ल नहीं। न ही इसे राजनीति में घुसाना चाहिए क्योंकि यह सब को मिलकर एक जगह काम नहीं करने देता। इसलिए ग़दर पार्टी जैसे आन्दोलन एकजुट व एकजान रहे, जिसमें सिख बढ़-चढ़कर फाँसियों पर चढ़े और हिन्दू मुसलमान भी पीछे नहीं रहे।
>
> ...
>
> **"यदि धर्म को अलग कर दिया जाये तो राजनीति पर हम सभी इकट्ठे हो सकते है। धर्मों में हम चाहे अलग-अलग ही रहें।**
>
> **"हमारा ख्याल है कि भारत के सच्चे हमदर्द हमारे बताये इलाज पर ज़रूर विचार करेंगे और भारत का इस समय जो आत्मघात हो रहा है, उससे हमे बचा लेंगे।"**
>
> (भगतसिंह, *साम्प्रदायिक दंगे और उनका इलाज,* 1928)

अगर आप एक इंसाफ़पसन्द नागरिक हैं, अगर आप एक संजीदा और ज़हीन नौजवान हैं, अगर आप एक सोचने-समझने वाले मेहनतकश इंसान हैं, जो भगतसिंह जैसे अपने महान शहीदों के प्रति ज़रा भी भावना रखते हैं, तो हम आपसे कहेंगे कि इन बातों पर सोचिए। भगतसिंह ने जो रास्ता बताया है, उसे अपनाइए। वरना, जैसा कि भगतसिंह ने कहा है, भारत का आज जो आत्मघात हो रहा है, उससे हम उसे बचा नहीं पायेंगे।

हम विशेष तौर पर पिछले चार दशकों में देख चुके हैं कि "राष्ट्रवाद", "संस्कृतिरक्षा", "धर्मध्वजारक्षा", "चाल-चेहरा-चरित्र", "सदाचार" का ढोल बजाकर संघ परिवार और भाजपा ने किस तरह देश को मूर्ख बनाया और दंगे-फ़साद

में आम मेहनतकश जनता का ख़ून बहवाया। आप पल भर को भी आँखें खोलकर देखेंगे, दिमाग़ खोलकर सोचेंगे तो आपको इनकी सच्चाई समझ आ जायेगी। जिन्होंने मृत सैनिकों के लिए ताबूत की ख़रीद में घोटाला किया हो, जिनका अध्यक्ष बंगारू लक्ष्मण कैमरे पर घूस लेता पकड़ा गया हो, जिनका नेता दिलीप सिंह जूदेव कैमरे पर घूस लेते वक़्त यह कहते पकड़ा गया हो कि 'पैसा अगर भगवान नहीं तो भगवान से कम भी नहीं', जिनके अरबों के व्यापम घोटाले, राफेल घोटाले और अब अडानी-हिण्डनबर्ग घोटाले ने इनका सारा "चाल-चेहरा-चरित्र" उजागर कर दिया हो, उनके "राष्ट्रवाद" की सच्चाई को कोई स्कूली बालक भी पल भर में पकड़ लेगा। इनकी "गोरक्षा", "लव जिहाद" का साम्प्रदायिक व उन्मादी एजेण्डा भी केवल जनता को भरमाने की चाल और साज़िश है, ये हम ऊपर देख चुके हैं।

शहीदेआज़म भगतसिंह ने बताया था:

> "इन दंगों में वैसे तो बड़े निराशाजनक समाचार सुनने में आते हैं, लेकिन कलकत्ते के दंगों में एक बात बहुत खुशी की सुनने में आयी। वह यह कि वहाँ दंगों में ट्रेड यूनियन के मज़दूरों ने हिस्सा नहीं लिया और न ही वे परस्पर गुत्थमगुत्था ही हुए, वरन् सभी हिन्दू-मुसलमान बड़े प्रेम से कारख़ानों आदि में उठते-बैठते और दंगे रोकने के भी यत्न करते रहे। यह इसलिए कि उनमें वर्ग-चेतना थी और वे अपने वर्गहित को अच्छी तरह पहचानते थे। वर्गचेतना का यही सुन्दर रास्ता है, जो साम्प्रदायिक दंगे रोक सकता है।
>
> "यह खुशी का समाचार हमारे कानों को मिला है कि भारत के नवयुवक अब वैसे धर्मों से जो परस्पर लड़ाना व घृणा करना सिखाते हैं, तंग आकर हाथ धो रहे हैं। उनमें इतना खुलापन आ गया है कि वे भारत के लोगों को धर्म की नजर से-हिन्दू, मुसलमान या सिख रूप में नहीं, वरन् सभी को पहले इन्सान समझते हैं, फिर भारतवासी। भारत के युवकों में इन विचारों के पैदा होने से पता चलता है कि भारत का भविष्य सुनहला है। भारतवासियों को इन दंगों आदि को देखकर घबराना नहीं चाहिए। उन्हें यत्न करना चाहिए कि ऐसा वातावरण ही न बने, और दंगे हों ही नहीं।

दोस्तो, आज देश को बचाने का यही रास्ता है। कल बहुत देर हो जायेगी।

"हमारे देश में धर्म के नाम पर कुछ इने-गिने आदमी अपने हीन स्वार्थों की सिद्धि के लिए लोगों को लड़ाते-भिड़ाते हैं। धर्म और ईमान के नाम पर किये जाने वाले इस भीषण व्यापार को रोकने के लिए साहस और दृढ़ता के साथ उद्योग होना चाहिए।"

- गणेश शंकर विद्यार्थी

अपने गुस्से की धार को एक-दूसरे और एक-दूसरे के धर्म या मज़हब की ओर मत मोड़ो। इसे अपने असली दुश्मन की ओर मोड़ो। यह असली दुश्मन है हमारे देश का मालिकों, धन्नासेठों, धनी व्यापारियों, धनी फार्मरों, दलालों, बिल्डरों, बिचौलियों का पूरा वर्ग, जिसे हम भगतसिंह का ही अनुसरण करते हुए पूँजीपति वर्ग कहते हैं। यह पूँजीपति वर्ग ही देश की समस्त प्राकृतिक सम्पदा पर, समस्त उत्पादन के साधनों पर और समस्त समृद्धि पर कब्ज़ा जमाकर बैठा हुआ है जबकि इसने इनमें से किसी भी चीज़ को पैदा नहीं किया। हर प्रकार की समृद्धि का स्रोत केवल श्रम और प्रकृति है। तो फिर इन पर निजी इजारेदारी क्यों? ताकि इन मुट्ठी भर अमीरज़ादों का मुनाफ़ा सुरक्षित रहे और हम खट-खटकर, मर-मरकर इनकी तिजोरियाँ भरते रहें। और अगर अपने ख़ून को सिक्कों में ढालकर इनकी तिजोरियाँ भरने से बच गये, तो हमें साम्प्रदायिक दंगों की आग में झोंक दिया जाये ताकि अपने ही भाइयों-बहनों का कत्लेआम करें या उनके हाथ कत्ल हो जायें। इनकी असलियत को समझते ही आप समझ जायेंगे कि हमें एक सच्चे सेक्युलर राज्य की ज़रूरत क्यों है।

हमारे प्यारे देशवासियो, यह बात समझ लीजिए कि हमारी एक ही गोलबन्दी बनती है और वह है जमात या वर्ग के आधार पर। जो अपनी मेहनत की रोटी खाता है, उसकी एक ही जमात है, उसके हित समान हैं, उसका दुश्मन भी साझा है, यानी उसकी मेहनत के फल को लूटकर ऐय्याशी करने वाली धनपशुओं की परजीवी जमात। जो आपको धर्म के नाम पर लड़ाने की कोशिश करे, उसका गिरेबान पकड़कर उसे अपने घर, अपने मुहल्ले, अपने गाँव और अपने शहर से बाहर कर दीजिए, चाहे वह भगवा या केसरिया पहनकर आया हो या फिर हरा या पीला। **हम ऐसा नहीं करते, तो हम बरबाद होंगे। हमारे आने वाली पीढ़ियाँ दंगे-फ़साद की आग में जलेंगी, अगर हम इन फ़िरक़ापरस्त, कट्टरपन्थी व साम्प्रदायिक ताक़तों को सिरे से**

नकार नहीं देते और भगतसिंह के शब्दों में यह पहचान नहीं लेते कि मेहनतकश अवाम का एक ही धर्म, एक ही जाति, एक ही क़ौम है: एक जमात और एक वर्ग का होना।

क्रान्तिकारी अर्थों में सेक्युलरिज़्म का केवल और केवल यही अर्थ है: ऐसे हर राज्य व राजनीति को नकार देना जो किसी भी रूप में धर्म का इस्तेमाल करती हो, जो किसी भी रूप में धर्म से अपने आपको जोड़ती हो; ऐसे हर राजनीतिक नेता को नकार देना जो किसी भी रूप में धर्म, धार्मिक पहचान या धार्मिक समुदाय का इस्तेमाल करता हो, या उसका नाम भी अपनी राजनीति में लेता हो। ऐसी हर राजनीति हर धर्म की जनता की दुश्मन है।

दोस्तो, इस सोच और नज़रिये को अपनाकर हम एकजुट हो सकते हैं, अपने जीवन के असल मुद्दों पर लड़ सकते हैं, अपने हक़ों को जीत सकते हैं, एक नया समाज बना सकते हैं। आइये, शहीदेआज़म भगतसिंह के बताये हुए रास्ते पर चलें और हर रंग की साम्प्रदायिक राजनीति को और ऐसी राजनीति करने वाले नेताओं को ठोकर मारकर किनारे कर दें और एक नया भारत बनायें, जिसमें धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्र के नाम पर सिर-फुटौव्वल न होती हो। केवल तभी हम अपनी आने वाली पीढ़ियों को एक बेहतर दुनिया देकर जा सकते हैं, वरना भविष्य अन्धकारमय होगा।

"यदि हमारे मरने का ज़रा भी अफसोस है तो जैसे भी हो हिन्दू-मुस्लिम एकता कायम करें। यही हमारी आखिरी इच्छा है और यही हमारी यादगार हो सकती है।"

- रामप्रसाद 'बिस्मिल'

हमारी माँगें :

1. सरकार तत्काल सच्चे सेक्युलर राज्य को सुनिश्चित करने हेतु एक विशेष क़ानून बनाये और संवैधानिक संशोधन करके धर्म को राजनीति व सामाजिक जीवन से पूर्णत: अलग करे।

2. उपरोक्त क़ानून के अनुसार, जो भी राजनीतिक नेता धर्म, धार्मिक प्रतीक, धार्मिक समुदाय, धार्मिक भावनाओं का इस्तेमाल करता है, मौखिक या लिखित तौर पर कहीं भी उसका ज़िक्र भी करता है, तो उसके लिए सख्त सज़ा, ग़ैर-ज़मानती वारण्ट व जेल सुनिश्चित की जाये।

3. धर्म के नाम पर किसी भी प्रकार का राजनीतिक संगठन बनाने पर पूर्ण पाबन्दी हो, चाहे वह किसी भी धर्म का हो।

4. पर्सनल लॉ समाप्त करके एक यूनीफॉर्म सिविल कोड लागू किया जाये। भाजपा व संघ परिवार इस मसले का अपने फ़ायदे के अनुसार साम्प्रदायिक इस्तेमाल करते हैं। वास्तव में, यूनीफॉर्म सिविल कोड आम मेहनतकश जनता के हित का क़दम है।

5. स्कूलों, कॉलेजों, व किसी भी प्रकार के सार्वजनिक संस्थान में धार्मिक प्रार्थना, धार्मिक प्रतीकों आदि पर पूर्ण पाबन्दी लगायी जाये, चाहे वह हिन्दू धर्म से जुड़ा हो, इस्लाम से जुड़ा हो, ईसाई धर्म से जुड़ा हो, सिख धर्म से जुड़ा हो या किसी अन्य धर्म से।

6. पुलिस व सशस्त्र बलों की छावनियों, पुलिस स्टेशनों आदि से धार्मिक स्थलों को बाहर किया जाये, चाहे वे किसी भी धर्म के हों। उनका संवैधानिक व औपचारिक कार्य नागरिक व्यवस्था को बहाल करना है, इसमें धर्म का कोई स्थान नहीं होना चाहिए।

7. हर व्यक्ति को कोई भी धर्म मानने या कोई धर्म न मानने की पूर्ण आज़ादी हो, कोई भी पूजा पद्धति अपनाने की पूर्ण आज़ादी हो, लेकिन धर्म पूर्णत: निजी जीवन का मसला होना चाहिए। किसी भी प्रकार से धर्म के नाम पर हल्ला-गुल्ला, शोर-शराबा करने की आज़ादी किसी को नहीं होनी चाहिए क्योंकि यह दूसरों की नागरिक स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप करता है।

ये वे बुनियादी क़दम हैं, जिनकी हम माँग करते हैं। ऊपर दिये गये एक उद्धरण में शहीदेआज़म भगतसिंह ने ठीक यही बात की है। दुनिया के विविध देशों में ऐसे क़ानून हैं भी। यह कोई नामुमकिन माँगें नहीं हैं। बल्कि इन माँगों पर लड़कर ही हम अपने निजी जीवन में कोई भी आस्था रखते हुए अपनी आर्थिक, राजनीतिक व सामाजिक माँगों पर एक हो सकते हैं, जैसा कि शहीदेआज़म भगतसिंह और उनके साथियों ने कहा था। यदि आप शहीदेआज़म भगतसिंह की विरासत को मानते हैं, तो इन माँगों का साथ देने के लिए **भगतसिंह जनअधिकार यात्रा** में शामिल हों, जिसका पहला चरण 12 मार्च से 14 अप्रैल 2023 तक जारी रहेगा।

जाति-धर्म के झगड़े छोड़ो-सही लड़ाई से नाता जोड़ो!
भगतसिंह की बात सुनो-नयी क्रान्ति की राह चुनो!
मेहनतकश की वर्ग एकता-ज़िन्दाबाद, ज़िन्दाबाद!